महासीर कथा

कल्याण पात्रा को मछली पकड़ने का शौक है लेकिन अमूमन वे खाली हाथ लौटते हैं! संध्या षडांगी ने इस बार भी उन्हें चेताया तो सही लेकिन वो साथ भी गईं। पकड़ने और छोड़ने की तसल्ली के साथ दोनों मुस्कराते हुए वापस लौटे। आपको आपका इनाम मिले और आप इसे दूसरों के लिए छोड़ दें!

ईमानदारी से कहूं, जब मैंने पहली बार कैंप की ओर जाते हुए रामगंगा की गहराई देखी तो मुझे इस ख्याल पर हंसी आ गई कि केपी ऐसे 'छिछले' पानी में महाकाय महासीर पकड़ने की उम्मीद लगाए बैठे हैं। लेकिन जब मछुआरों के बड़ी-बड़ी मछलियां पकड़ने के किस्से सुने तो मेरी हंसी उत्सुकता में बदल गई। दोपहर ढलते-ढलते नदी के गहराई वाले इलाके में पहुंचने पर मेरे हैरान होने की बारी थी। तालों में बड़ी-बड़ी मछलियां चक्कर काट रही थीं। जैसे उत्सुक दर्शकों के लिए किसी प्रदर्शन की तैयारी में हों या शायद शंकालुओं को यकीन करा रही हों। अब नदी के काफी बड़े हिस्से को देख लेने और मछली पकड़ने की कवायद के बाद मुझे महसूस हुआ कि मैं कितना कम जानती थी।

हम सुबह साढ़े नौ बजे दिल्ली से मार्चूला के लिए रवाना हुए। यह कॉर्बेट नेशनल पार्क के लिए मशहूर रामनगर से 34 किमी आगे छोटा सा गांव है और रामगंगा का लंबा हिस्सा यहां से होकर गुजरता है।

रामनगर पार करने के बाद केपी ने मुझे जंगली जानवरों पर निगाह रखने को कहा; वह खुद सड़क पर बने स्पीडब्रेकरों पर ध्यान लगाए हुए थे। मेरी नजर लगातार खिड़की के बाहर किसी बाघ या तेंदुए को ढूंढ रही थी। जो थोड़ा बहुत हमें नजर आता - चीतल, मोर

और वनमुर्गी, केपी मेरी ओर इशारा करते और मेरी प्रेक्षण क्षमता पर ढेर सारी बातें सुना डालते। कुछ दूर जाने पर हमारे आगे वाली कार अचानक रुक गई और ऐसा लगा कि उन लोगों ने कोई दिलचस्प चीज ढूंढ ली है। केपी बड़ी उम्मीद के साथ झटपट गाड़ी से नीचे उतरे लेकिन उनका सामना बस एक मोर से हो सका! केपी की बातों पर यकीन करना ही पड़ा, वरना जब तक मैं अपनी सीटबेल्ट खोल कर बाहर निकली तब तक मोर महाराजा भी रफूचक्कर हो चुके थे। हमें यहां-वहां

के लिए बहुत मेहनत की। लगता था जैसे उन्हें खुराक मिल गई थी। 12 किलो की मछली के ईनाम ने केपी की अगले दो दिनों तक दोपहर की नींद भी गायब कर दी थी और वह और बड़ी मछली की उम्मीद में कड़ी मेहनत कर रहे थे। कैंप के अधीन आने वाले दो अन्य तालाब बहुत दूर थे और वहां पहुंचना आसान नहीं था। चट्टानों का आकार बड़ा होता जा रहा था और रास्ते में कई जगह पानी में चलना था। वह सूर्यास्त तक वहां रुके तथा नदी व चट्टानों की तस्वीरें खींचीं। इसके बाद बहस करते हुए हम कैंप में वापस लौट गए।

क्या घटनापूर्ण दिन था और अब उतनी ही खूबसूरत रात! इसका समापन बड़े करीने से अलाव के पास सजे भोजन के साथ हुआ, जिसकी हमें अब तक आदत पड़ चुकी थी।

अगला दिन मेरे लिए भाग्यशाली था। सुबह पहले ही प्रयास में मेरे हाथ एक छोटी सी महासीर लगी। हालांकि यह इतनी छोटी थी कि कोई इज्जतदार मछुआरा इसका जिक्र तक करना पसंद नहीं करेगा लेकिन यह मेरी पहली मछली थी और मेरे लिए खास थी। केपी ने मुझे मछली पकड़ने की बंसी थमा दी और कहा कि मैं रात के भोजन के लिए थोड़ी-बहुत 'चिलवा' पकड़ लूं। चिलवा एक स्थानीय मछली है जो हालांकि काफी देर तक मुझे झांसा देती रही तभी एक महासीर मेरे जाल में फंस गई। इसका वजन कोई 300 ग्राम रहा होगा। यह रहा मेरा रात्रिभोज, मैंने सोचा लेकिन तभी केपी ने नन्ही महासीर को सावधानी से कांटे से छुड़ाया और वापस नदी में छोड़ दिया।

'चिलवा' बहुत छोटी मछलियां हैं जिन्हें आप रामगंगा में हर जगह देख सकते हैं। जब आप पानी में चलते हैं तो वे आपके पांव के पास आ जाती हैं। मुझे नदी के छिछले पानी वाले हिस्से में इन्हीं को पकड़ने को कहा गया था और मैं कोशिश करती रही, करती रही लेकिन हाथ कुछ नहीं लगा। बाद में दोपहर को मैंने केपी के भाग्यशाली चौथे तालाब की बड़ी चट्टान पर चढ़ने से इंकार कर दिया और इसके बजाय नीचे नदी के किनारे बैठ कर चिलवा के साथ अपनी किस्मत आजमाने का फैसला किया। चांदी के छोटे से कांटे पर

चारे की कई आकार-प्रकार की मात्रा आजमाने के बावजूद जब मेरे हाथ कुछ भी नहीं लगा तो मैं नंगे हाथों से मछलियां पकड़ने के लिए पानी में उतर गई। नीचे इफरात में चिलवा तैर रही थीं और कई को तो मैंने छुआ भी। लेकिन यह कोशिश भी बेकार साबित हुई। मैं चारे की फिराक में घूम रही मछलियों को देख सकती थी! मुझे लगा वे मुझ जैसी नौसिखिया के मुकाबले बहुत चालाक थीं और बड़े विचित्र ढंग से वे बिना कांटे में फंसे चारे को उड़ा लेती थीं।

अगली सुबह केपी ने पिछली रात किसी तेंदुए के आसपास होने की खोजखबर ली। उन्हें चिड़ियों की चहचहाट व हिरनों की चेतावनी से इस बात का अंदेशा था। लेकिन सारे कुत्ते पूंछ हिलाते हुए वहां मौजूद थे और बता रहे थे कि रात की चेतावनी झूठी थी।

दिल्ली वापस लौटने से पहले यह मछली पकड़ने का हमारा आखिरी सत्र था। कहा जाए तो एक तरह से यह रामगंगा के भव्य नजारों से रूबरू होने का अवसर था। मछलियों से भरी हुई रामगंगा में आखिरी बार किसी बड़ी मछली को पकड़ने की इच्छा से नहीं बल्कि उन्हें अपनी छूटती-बिसराती हुई अल्पायु स्मृतियों में बनाए रखने की एक और कोशिश। देवेन्द्र और उन सब लोगों को विदा देकर, जिन्होंने यहां हमारे प्रवास को बेहद आरामदायक व रोमांचकारी बनाया, हम वापस बातुली के रिजॉर्ट में लौटे जहां केपी ने अपनी कार खड़ी की थी।

वापस लौटने के दौरान हमारी मुलाकात सड़क के बीच में खड़ी एक मादा सियार से हुई। केपी नीचे उतरे और कुछ तस्वीरें उतारने की कोशिश की लेकिन हमारी उत्सुकता से डर कर वह भाग खड़ी हुई। सियार घने जंगल के बीच कहीं गायब हो गई और कुछ मिनट आगे चलने के बाद कार्बेट पार्क भी हमारी नजरों से ओझल हो गया।

रामनगर में बिताए तीन दिन पिकनिक मनाने, तैराकी करने, शांति से पढ़ने और 'आध्यात्मिक ज्ञान' हासिल करने की थकी हुई उम्मीदों के बदले मछली, बड़ी मछली, और बड़ी मछली के लालच के पीछे भागने में बदल गए। छुट्टी बिताने आए दो व्यक्ति अचानक दृढ़संकल्प कार्यकर्ताओं में तब्दील हो गए - फर्क इतना भर है कि वे एक खेल के लिए काम करते रहे - महाशीर को पकड़ने के लिए। मछली पकड़ने को लेकर मेरा बुद्धिमत्तापूर्ण उपेक्षाभाव सुनहरी व प्रदीप्तमान और किसी तरह जीवित हो उठे रत्न की तरह दिखाई पड़ने वाली महासीर को दोपहर बाद की धूप में बांहों में उठाने की इच्छा में बदल गया।

एक और बात है जिसने हमारे आनंद को खास बनाया। प्रत्येक महासीर को पकड़ने के लिए हमने दाम चुकाया और फिर उसे छोड़ दिया, इस बात का अर्थ है कि इस प्रजाति की और मछलियां जिंदा रहेंगी तथा दूसरों का मनोरंजन करेंगी और इस तरह नदी भी बनी रहेगी।

आलेख: संध्या षडांगी
चित्र: कल्याण पात्रा

सामने का पृष्ठ, बाएं: पर्वत, धारा और एक नदी, महासीर के खेल के लिए और क्या चाहिए? दाएं: वाणघाट रीवर लॉज का एक कॉटेज - मछली वहीं पकड़नी हो तो यहां आनंद लीजिए। नीचे, बाएं: आराम फरमाते मच्छीमार और दोस्त। दाएं: उत्सुकता से भरे मच्छीमार और दोस्त।

कुछ वनमुर्गियां भी दिखाई पड़ी लेकिन मोर हमारी पूरी यात्रा में छाए रहे - अगर वे दिखाई नहीं पड़ते थे तो उनकी आवाज सुनाई देती और अगर आवाज भी नहीं तो कहीं न कहीं एक अकेला मोरपंख उनकी मौजूदगी का अहसास करा देता।

शाम 4 बजे हम बलुली गांव में थे। यह वाणघाट से निकटतम गाड़ी खड़ी करने लायक जगह थी। बलुली पुल पार करने के बाद 3-4 किमी पैदल चल कर आप

वाणघाट रिवर लॉज तक पहुंच सकते हैं। हमने अपनी कार खड़ी की और हरी जिप्सी व दो लोगों को ढूंढने लगे जिन्हें यहां हमारे इंतजार में रहना था। आस-पास उनका कहीं अता-पता नहीं था। गनीमत है कि एक स्थानीय लड़का हमारा सामान कैंप तक पहुंचाने के लिए तैयार हो गया, जिसे केपी के पुराने दोस्त सुमंत्र घोष चलाते हैं। हम चलने ही वाले थे कि हमारा बहुप्रतीक्षित वाहन आता दिखाई दिया। यह मेरी अब तक की सबसे झटकेदार यात्रा थी।

वाणघाट रीवर लॉज के आत्मीय कर्मचारियों व भोटिया कुत्तों ने हमारा स्वागत किया। भूरी-हरी पृष्ठभूमि के बीच कॉटेज ऐसा लगता था जैसे किसी परीकथा से इसे खींच निकाला गया है। आराम करने और भोजन के लिए वहां एक बुर्ज था जिसमें बाकायदा एक अंगीठी भी थी। चाय पीने और अपने केयरटेकर-गिल्ली-गाईड और कुक देवेन्द्र से दोस्ती गांठ लेने के बाद हम पानी की गहराई का जायजा लेने और केपी के लिए मछली पकड़ने का बंदोबस्त देखने नदी के किनारे पहुंचे।

पश्चिमी रामगंगा एक झील से निकल कर कॉर्बेट टाइगर रिजर्व के उत्तर की ओर करीब 200 किमी का सफर तय करके यहां पहुंचती है। मानसून के मौसम को छोड़ कर साल भर इसका पानी साफ रहता है। यहां पाई जाने वाली मछलियों में गोल्डन महासीर, गूंच, भारतीय ट्राउट और बेहद शर्मीली कलबंशी प्रमुख हैं।

हम नदी के उस हिस्से में थे जिसकी देखभाल लॉज की ओर से की जाती है। घोष ने बताया - 'जानेमाने संरक्षणवादी व नरभक्षियों के काल जिम कॉर्बेट बेहतरीन मच्छीमार भी थे। रामगंगा में महाशीर से मुठभेड़ का दिलचस्प विवरण उनकी कहानी 'मेरे सपनों की मछली' में मिलता है। इस पौराणिक मछली और समृद्ध धरोहर को संरक्षित करने की प्रेरणा से कॉर्बेट टाइगर रिजर्व की सीमा पर रामगंगा के किनारे यह लॉज बना है।'

वन विभाग की हाल की पहल पर घोष द्वारा संरक्षित रामगंगा का यह हिस्सा लगभग 4 किमी लंबा है। लॉज के सामने बह रही रामगंगा की बाकायदा चौकीदारी होती है और नदी के किसी भी ताल के मुकाबले यह सबसे बड़ी महासीरों के लिए मशहूर हो चुका है। संरक्षित हिस्से से ऊपरी और निचले इलाकों में डायनामाइट से मछलियों का शिकार किया जाता है लेकिन वाणघाट की तालों में ये पूरी तरह सुरक्षित हैं।

यह परियोजना उत्तरांचल सरकार द्वारा सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के बीच शुरू की गई साझेदारी का हिस्सा है। इसमें उद्यमी, वन विभाग व स्थानीय ग्रामीण पारिस्थितिकी विकास समिति बना कर महासीर संरक्षण के लिए काम करती हैं। स्थानीय रोजगार पैदा करने के अलावा एंगलिंग परमिट से मिलने वाले लाभ को पारिस्थितिकी विकास समितियों के बीच बांटा जाता है।

'महासीर' भारतीय उपमहाद्वीप में पाई जाने वाली शल्कदार मछलियों की कई प्रजातियों का सामूहिक नाम है। कभी यह अफगानिस्तान के पश्चिम से दक्षिण पूर्वी एशिया के कुछ हिस्सों तक हिमालय की पहाड़ी तलहटियों में पाई जाती थी। लेकिन अब बड़ी महासीर केवल भारतीय हिमालय में मिलती है। पकड़ने के लिहाज से इसे बेहद मुश्किल माना जाता है। रामगंगा में लाल पंख वाली महासीर (टॉर टॉर) के अलावा पीले पंख वाली या गोल्डन महासीर (टॉर प्यूटीटोरा) भी पाई जाती है। यह एक संकटग्रस्त प्रजाति है लेकिन वाणघाट में ये खूब फल-फूल रही हैं। नारंगी-सुनहरी मछलियों के झुंड के झुंड। लेकिन बेहद मुश्किल

तुनकमिजाज, मूडी और निर्विवाद रूप से सबसे सुंदर है गोल्डन महासीर जो विस्तृत और तेज रफ्तार वाले पानी में रहती और बड़ी होती है।

महासीर को 'भारतीय खेल मछलियों का राजा' कहा जाता है और इस उपमा के वाजिब कारण भी हैं। यह कार्प और मिन्नो परिवार की सबसे बड़ी सदस्य है जो 220 किग्रा तक बढ़ सकती है और जबर्दस्त मुकाबला करती है। महासीर को खींचने में लगने वाला वक्त इसके भार के अनुपात में बढ़ता चला जाता है - हर 5 पाउंड भार वृद्धि पर 5 मिनट ज्यादा लगते हैं। यह एक खेल मछली है, यानी पकड़ने के बाद इसे दोबारा पानी में छोड़ देना है। इसका मतलब यदि आप यहां आएं तो पकड़ी हुई मछली पास रखने की उम्मीद न करें। इस नियम का कड़ाई से पालन होता है।

कैंप में हमारे वापस लौटने तक अंधेरा होने लगा था। रात लंबी और पक्षियों की रुक-रुक कर आती पुकारों से भरी हुई थी। जुगनू ऐसे दिखाई पड़ रहे थे जैसे कोई अंधेरे में जलती हुई सिगरेट से खेल रहा हो। हम नजारों को जज्ब कर रहे थे कि रात के भोजन की पुकार आ गई। देवेन्द्र ने हमारे लिए चिकन, सूप, सब्जी, चावल और चपातियां बनाई थीं। इस वीराने में यह किसी शानदार दावत से कम नहीं।

अगली सुबह हम जल्दी तालाब की ओर निकल पड़े (यहां कुल छह तालाब हैं)। हमारे साथ दो गार्ड भी थे जो नदी की चौकीदारी के अलावा मछलियों को दाना डालते हैं। आकार बढ़ाने के लिए घोष पिछले कई सालों से मछलियों को खिला रहे हैं। घोष की तरकीब काम कर रही है क्योंकि हमें चौकीदारों के इर्दगिर्द ढेर सारी छोटी-छोटी महासीर इकट्ठा होती दिखाई दीं। वाणघाट की मछलियां एक तरह से पालतू जैसी हो गई थीं, चौकीदार उनकी देखभाल करते थे और उन्हें खाना खिलाते थे। इस बात ने एंगलिंग को बहुत आसान और बहुत मुश्किल भी बना दिया था। चूंकि मछलियों का पेट भरा रहता था और वह भोजन के लिए बहुत उत्सुक नहीं दिखाई देती थीं, इसलिए पकड़ने के लिए डाले गए चारे की ओर वह मुश्किल से ही नजर डालती थीं। शायद इसलिए भोजन के एक निश्चित अनुशासन के अलावा अगर कुछ भिन्न होता नजर आता

तो वह समझ जाती थीं। छोटी मछलियों को पकड़ना आसान था और वह चारे के आसपास मंडराने लगतीं लेकिन बड़ी मछलियां एक सुरक्षित दूरी बनाए रखतीं।

केपी के हाथ पहली मछली ताल नंबर 2 में लगी, जो करीब तीन किलो की थी। जिंदा महासीर से पहली बार मेरा वास्ता पड़ा था और मैं इसकी रंगत व नफासत पर फिदा थी। उन्होंने सावधानी से हुक बाहर निकाला और मछली को वापस नदी में छोड़ दिया। अगले तालाब में छोटी सी मछली हाथ लगी और केपी को इस बार बहुत मजा नहीं आया। महासीर जैसी मछली के लिए 2-3 किलो कोई मायने नहीं रखता।

नाश्ते के बाद हम चौथे तालाब की ओर बढ़े। यहां पहुंचने के लिए हमें पानी में उतरना पड़ा। भारी चट्टानें आगे बढ़ने में मुश्किल पैदा कर रही थीं। मैं चट्टानों के ऊपर किसी तरह संतुलन बना कर कैमरा, बैग व पानी की बोतल आदि सामान लादे हुए संभल-संभल कर चलती रही। मेरे पास पानी में चलने वाले जूते या ऐसी ही कुछ चीज होती तो मुझे सहूलियत होती। मेरे फ्लोटर और स्नीकर जूतों ने तो यहां तीसरे ही दिन अपनी उपयोगहीनता साबित कर दी।

पानी और फिसलनदार चट्टानों को पार करते हुए लगा जैसे हम मीलों चल लिए हों और मैं अब मंजिल तक पहुंचने की उम्मीद कर रही थी। चौथे तालाब में हमें एक बड़ी चट्टान पर अपना बसेरा बनाना पड़ा, जहां से गहरे पानी तक हमारी पहुंच बनती थी। इसका मतलब यहां से हम बड़ी मछली हाथ लगने की उम्मीद कर सकते थे। चट्टान पर चढ़ना उस वक्त किसी पहाड़ी पर चढ़ने से कम नहीं था।

हमारी मेहनत रंग लाई। यहां आकर आखिर केपी की किस्मत पलटी और एक बड़ी मछली उनके हाथ लगी, पूरे 12 किलो की महासीर। इस दैत्य के कांटे को मुंह में लेते ही हम सब को अपने पांव जमाने पड़े। एक बोल्डर से दूसरे बोल्डर पर कूदते हुए वो लोग मछली के साथ रफ्तार बनाए रखने की कोशिश कर रहे थे और मैं बेचैन हो रही थी कि आखिर वो उसे पानी से खींच क्यों नहीं रहे हैं। यह इतना आसान नहीं था, मछली बहुत ताकतवर होती है और आसानी से हथियार नहीं डालती। हम लोग उसके थकने और समर्पण करने की प्रतीक्षा कर रहे थे। वह एक शेरनी (बेहतर उपमा भी दी जा सकती है) की तरह लड़ी लेकिन डेढ़ घंटे तक जूझने के बाद अंततः उसने समर्पण कर दिया। हम सब चिल्ला-चिल्ला कर केपी को हिदायतें दे रहे थे और केपी मछली को बाहर निकालने में जुटे थे। यह लड़ाई इतनी लंबी चली कि केपी को बेचारी मछली पर दया आ रही थी। वह इसे पहले ही छोड़ देना चाहते थे, आखिर इतनी दौड़-भाग केवल कांटे की खातिर तो नहीं की थी। मछली को पानी से बाहर सिर्फ एक बार निकलना पड़ा जब अपने शिकार के साथ मुस्कराते हुए केपी और दोनों थके हुए चौकीदारों ने पानी में उतर कर तस्वीर खिंचवाई।

इस तमाशे के खत्म होने तक मैं भी औरों की तरह पसीने से तरबतर थी और अभी हमें दो और तालाबों तक जाना था। कुत्ते की तरह हांफते और हर मिनट में फुदकते हुए मैंने केपी और दोनों चौकीदारों को पकड़ने